4 एस.सी.आर. 1522: 2025 आई.एन.एस.सी. 556

रामचंद्रैया एवं अन्य

बनाम

एम. मंजुला एवं अन्य

(आपराधिक याचिका संख्या 2179/2025)

(23 अप्रैल 2025)

[दीपंकर दत्ता एवं प्रशांत कुमार मिश्रा*, न्यायाधीश]

विचार के लिए मुद्दा

मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, क्या उच्च न्यायालय द्वारा सीबीआई से जांच कराने का निर्देश देना उचित था?

संक्षिप्त मुक़दमा

जांच- सीबीआई जांच- उच्च न्यायालय का निर्देश। मृतक एक डीकेए नामक सांसद के करीबी विश्वासपात्र थे- उनके पास अनेक अचल संपत्तियाँ थीं- डीकेए की मृत्यु के बाद मृतक और डीकेए के बच्चों (अभियोजकों में से एक) के बीच उन संपत्तियों को लेकर विवाद- मृतक की रहस्यमय परिस्थितियों में मृत्यु- मृतक की हत्या के आरोप में अन्य बातों के अलावा अभियोजकों के विरुद्ध एफआईआर दर्ज- एसआईटी गठित- मजिस्ट्रेट एसआईटी द्वारा की गई जांच से संतुष्ट नहीं, पुलिस द्वारा आगे जांच का निर्देश दिया- मृतक की पत्नी और पुत्र द्वारा चुनौती, उच्च न्यायालय ने सीबीआई द्वारा आगे जांच का निर्देश दिया- सुदृढ़ता:

---

*लेखक

निर्णय: उच्च न्यायालय ने सीबीआई द्वारा जांच के निर्देश सही रूप से दिए। एक बार एफआईआर दर्ज हो जाने और जांच हो जाने के बाद, संभावित संदिग्ध या अभियुक्त द्वारा सीबीआई जांच के निर्देश को चुनौती देना स्वीकार्य नहीं है। किसी विशेष एजेंसी को जांच सौंपने का विषय मूलतः न्यायालय के विवेकाधिकार के अंतर्गत आता है। तथ्यों के आधार पर, मृतक की मृत्यु से जुड़ी सच्चाई का निर्धारण सीबीआई द्वारा पूर्ण एवं निष्पक्ष जांच के बाद किया जाना आवश्यक है। मृतक, डीकेए से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ था, जो एक सांसद तथा श्री वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर (तिरुमला तिरुपति देवस्थानम) के अध्यक्ष थे। मृतक एक सफल रियल एस्टेट व्यवसायी था और बेंगलुरु तथा उसके आसपास उसकी विशाल संपत्तियाँ थीं। उसकी रहस्यमय मृत्यु से पूर्व दो अलग-अलग वसीयतें निष्पादित की गई थीं–एक उसकी पत्नी (प्रतिवादी सं. 1) के पक्ष में और दूसरी प्रतिवादी सं. 12 के पक्ष में, जिसे उसकी विवादास्पद मृत्यु के बाद पंजीकृत किया गया। इसके अतिरिक्त, नामांतरण एवं स्वामित्व की घोषणा से संबंधित दीवानी कार्यवाहियां भी लंबित हैं, साथ ही स्टाम्प पेपरों की जालसाजी से संबंधित आरोप भी हैं। आगे की जांच के निर्देश देते समय मजिस्ट्रेट ने तथा विवादित आदेश के अंतर्गत उच्च न्यायालय ने जांच में मौजूद गंभीर कमियों को रेखांकित किया। उच्च न्यायालय के आदेश की पुष्टि की जाती है। **[अनुच्छेद 16, 18]**

संवैधानिक न्यायालय - सीबीआई जांच का निर्देश देने की शक्ति

इस शक्ति का प्रयोग संयमपूर्वक तथा केवल असाधारण परिस्थितियों में ही किया जाना चाहिए:

निर्णय: उच्च न्यायालय अथवा सर्वोच्च न्यायालय, जो कि संवैधानिक न्यायालय हैं, मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के आधार पर सीबीआई जांच के निर्देश देने की असाधारण शक्ति से संपन्न हैं। संवैधानिक न्यायालयों को, एक सर्वोच्च एवं प्रमुख संवैधानिक संस्था होने के नाते, न्याय प्रदान करने का दायित्व अपेक्षापूर्वक एवं श्रद्धापूर्वक सौंपा गया है। सीबीआई जांच का निर्देश देने की शक्ति का प्रयोग सामान्यतः संयमपूर्वक तथा केवल असाधारण परिस्थितियों में ही किया जाना चाहिए; किंतु जब तथ्य इसकी मांग करते हों, तब पूर्ण न्याय करने, जांच की विश्वसनीयता सुनिश्चित करने, जनविश्वास स्थापित करने तथा मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए इस शक्ति का प्रयोग अत्यंत आवश्यक हो जाता है। **[अनुच्छेद 11]**

उद्धृत निर्णय

भारतीय संघ एवं अन्य बनाम डब्ल्यू. एन. चड्ढा ***[1992] सुप. 3 एससीआर 594: (1993) सुप. 4 एससीसी 260****; सतीश कुमार न्यालचन्द शाह बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य* ***[2020] 3 एससीआर 1106: (2020) 4 एससीसी 22*** *– पर निर्भर।*

विनय त्यागी बनाम इरशाद अली ***[2012] 13 एससीआर 1005: (2013) 5 एससीसी 762****; पूजा पल बनाम भारतीय संघ एवं अन्य* ***[2016] 11 एससीआर 560: (2016) 3 एससीसी 135****; मन्दाकिनी दीवान एवं अन्य बनाम छत्तीसगढ़ उच्च न्यायलय एवं अन्य* ***[2024] 9 एससीआर 86: 2024 एससीसी ऑनलाइन SC 2448*** *– संदर्भित।*

अधिनियमों की सूची

भारतीय दंड संहिता, 1860; दंड प्रक्रिया संहिता, 1973

कीवर्ड्स की सूची

सीबीआई जांच; सीबीआई जांच के लिए उच्च न्यायालय द्वारा निर्देश; संभावित संदिग्ध या अभियुक्त; परमादेश (रिट ऑफ मैनडेमस); आगे की जांच; रहस्यमय मृत्यु; डी. के. आदिकेशावलु, सांसद; निकट सहयोगी; कूटरचित/गढ़ी हुई वसीयत; मृत्यु के पश्चात पंजीकृत; निजी परिवाद; विशेष जांच दल (एसआईटी) की रिपोर्ट; एकपक्षीय जांच; संवैधानिक न्यायालय; सीबीआई जांच का निर्देश देने की असाधारण शक्ति; संभावित अभियुक्त; प्रारंभिक चरण में बचाव का अधिकार; एफआईआर के पंजीकरण के चरण पर सुनवाई का कोई अधिकार नहीं।

केस का उद्भव

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 2179 वर्ष 2025
कर्नाटक उच्च न्यायालय, बेंगलुरु द्वारा रिट याचिका संख्या 7784/2022 में पारित दिनांक 03.09.2022 के निर्णय एवं आदेश से

साथ में

आपराधिक अपील संख्या 2180 वर्ष 2025

पक्षों के लिए उपस्थितियाँ

अपीलकर्ता के लिए अधिवक्ता :
अमन लेखी, सुश्री महालक्ष्मी पावनी, वरिष्ठ अधिवक्ता; उज्ज्वल सिन्हा, अनिकेत सेठ, जी. बालाजी, टोमी चाको, नीलश्वर पावनी, सुश्री शौर्य मिश्रा, सुश्री तुआलिया रहमान।

प्रतिवादियों के लिए अधिवक्ता:
के. एम. नटराज, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल (ए.एस.जी.), निशांत पाटिल, अतिरिक्त महाधिवक्ता (ए.ए.जी.), मुकुल रोहतगी, दुश्यंत दवे, देवदत्त कामत, वरिष्ठ अधिवक्ता; महेश ठाकुर, सुश्री अनुपर्णा बोरदोलोई, अक्षत मालपानी, श्रीमती गीतांजलि बेदी, रणविजय सिंह चंदेल, सुश्री आयुषी गौर, वी. एन. रघुपाठी, रेवंत सोलंकी, आयुष पी. शाह, विघ्नेश आदित्य एस., मुकेश कुमार मारोरिया, वी.वी.वी. पट्टाभि राम, प्रशांत रावत, पूर्णेंदु बाजपेयी, रजत नायर, रमण यादव, श्रीमती खुशबू अग्रवाल, शरथ नाम्बियार, पारस नाथ सिंह, रिज़वान अहमद, रिज़वान अहमद, शकील अहमद, शकील अहमद, सदाशिव, निशांत संजय कुमार सिंह, फतेश कुमार साहू, देवेंद्र कुमार गुप्ता, सचिन अग्रवाल, सुश्री मुमताज़ जावेद शेख, सुश्री पुष्पा गुप्ता, आशीष सिंह, आशीष कुमार पांडेय, जुनैद मोहम्मद जुनैद।।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

<u>आदेश</u>

प्रशांत कुमार मिश्रा, न्यायाधीश

अनुमति प्रदान की गयी|

2. ये अपीलें कर्नाटक उच्च न्यायालय, बेंगलुरु द्वारा रिट याचिका संख्या 7784/2022 में पारित दिनांक 03.09.2022 के विवादित निर्णय को चुनौती देती हैं, जिसके द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दायर रिट याचिका आंशिक रूप से स्वीकार की गई थी तथा पी.सी.आर. संख्या 51691/2020 में मजिस्ट्रेट द्वारा दिनांक 21.02.2022 एवं 10.03.2022 को पारित आदेशों को केवल इस सीमा तक निरस्त कर दिया गया था, जहाँ उन्होंने एचएएल पुलिस स्टेशन द्वारा आगे की जांच कराए जाने का निर्देश दिया था। इसके अतिरिक्त, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, नई दिल्ली/प्रतिवादी संख्या 11 को परमादेश (रिट ऑफ मैनडेमस) जारी किया गया, जिसके तहत

अपराध संख्या 89/2020, 148/2020 तथा 7/2021 में आगे की जांच करने और अपनी रिपोर्ट अधिकतम छह माह की अवधि के भीतर संबंधित न्यायालय में प्रस्तुत करने के निर्देश दिए गए।

3. एसएलपी (आपराधिक) संख्या 10515/2022 से उत्पन्न अपील उच्च न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी संख्या 10 द्वारा दायर की गई है, जिसे इस अपील के साथ ही संयुक्त रूप से निपटाया जाएगा।

4. वर्तमान याचिका दायर किए जाने तक की संक्षिप्त तथ्यात्मक पृष्ठभूमि, जैसा कि अभिवचनों/दलीलों से परिलक्षित होता है, निम्नलिखित है:

4.1 प्रतिवादी संख्या 1, जो उच्च न्यायालय के समक्ष प्रथम याचिकाकर्ता थीं, के. रघुनाथ (आगे "मृतक" कहा गया है) की पत्नी हैं और प्रतिवादी संख्या 2, प्रतिवादी संख्या 1 के पुत्र हैं। मृतक के जीवनकाल में कथित रूप से बेंगलुरु ज़िले के विभिन्न स्थानों तथा अन्य कई स्थानों पर उसकी अनेक अचल संपत्तियाँ थीं। यह कहा गया है कि मृतक, डी.के. आदिकेशावलु[1] नामक एक सांसद का निकट संबंधी था, जो अपने जीवनकाल में सक्रिय राजनीति में रहे। डीकेए का निधन 24.04.2013 को हुआ, जिसके बाद डीकेए के पास रही संपत्तियों की खोज-बीन/छानबीन शुरू हुई। डीकेए के बच्चे, विशेष रूप से प्रतिवादी संख्या 12–जो एसएलपी (आपराधिक) संख्या 10515/2022 से उत्पन्न अपील में अपीलकर्ता संख्या 1 भी है–और उसके अन्य निकट सहयोगियों ने मृतक पर उसके स्वामित्व वाली कुछ अचल संपत्तियों के हस्तांतरण के लिए दबाव डालना शुरू किया। प्रतिवादी संख्या 12 का आरोप था कि मृतक के नाम दर्ज उन संपत्तियों की आय का स्रोत उनके पिता का है। हालाँकि, प्रतिवादियों का यह मामला है कि मृतक ने प्रतिवादी संख्या 12 के दबाव का विरोध किया और यह दावा किया कि वह उन संपत्तियों का पूर्ण स्वामी है, जिन्हें उसने रियल एस्टेट से अर्जित अपनी स्वयं की आय से प्राप्त किया था। परिणामस्वरूप, मृतक और डीकेए के बच्चों के बीच का विवाद सुलझने योग्य न रह सका और अपूरणीय रूप से बढ़ गया।

4.2 वर्ष 2016 में यह तथ्य सामने आया कि स्वर्गीय डीकेए के परिसरों पर आयकर छापा पड़ा था, जिसका आरोप मृतक पर लगाया गया। प्रतिवादियों का यह कहना है कि मृतक ने दिनांक

---

1. डीकेए

28.01.2016 को एक पंजीकृत वसीयत निष्पादित की थी, जिसके द्वारा उसने अपनी समस्त संपत्तियाँ प्रथम प्रतिवादी के पक्ष में वसीयत कर दी थीं। अपीलकर्ताओं का कहना है कि मृतक ने अपने जीवनकाल में उक्त वसीयत के निष्पादन का तथ्य अपीलकर्ताओं में से किसी को भी नहीं बताया था। किसी प्रकार, जब मृतक अपनी एक संपत्ति को बेचने का इच्छुक था और दिनांक 04.05.2019 को विक्रय विलेख निष्पादित करने वाला था, तब यहां के प्रतिवादी संख्या 12 को इसकी जानकारी हुई और उसने अपनी बहन अर्थात प्रतिवादी संख्या 14 के साथ मिलकर मृतक को प्रतिवादी संख्या 14 के निवास स्थान पर बुलाया। बुलाए जाने पर मृतक ने दिनांक 02.05.2019 की दोपहर को यह बताते हुए घर छोड़ा कि वह प्रतिवादी संख्या 12 और 14 से मिलने जा रहा है। मृतक दो दिनों तक लापता रहा और तत्पश्चात दिनांक 04.05.2019 को प्रातः 7.00 बजे, प्रतिवादियों का कहना है कि उन्हें मृतक का फोन आया, जिसमें उसने बताया कि उसके जीवन को खतरा है। चूँकि के. रघुनाथ ने अपने जीवन को खतरे की बात कही थी, इसलिए प्रतिवादी संख्या 1 ने अपने पुत्र/प्रतिवादी संख्या 2 को (एसएलपी संख्या 10515/2022 से उत्पन्न अपील में प्रथम अपीलकर्ता के) घर भेजा ताकि उसके पिता के बारे में जानकारी ली जा सके। द्वितीय प्रतिवादी व्हाइटफील्ड, बेंगलुरु स्थित गेस्ट हाउस में गया और लगभग प्रातः 8.30 बजे उसने अपने पिता को छत के पंखे से लटका हुआ पाया। उसी दिन द्वितीय प्रतिवादी/पुत्र का बयान दर्ज किया गया, जिसने उस समय किसी पर संदेह व्यक्त नहीं किया और यह माना कि उसके पिता ने आत्महत्या की है, तथा पुलिस को यह बयान दिया कि उसे किसी पर कोई संदेह नहीं है। पुत्र के उक्त बयान के आधार पर एच.ए.एल. पुलिस द्वारा यू.डी.आर. संख्या 28/2019 में अप्राकृतिक मृत्यु रिपोर्ट दर्ज की गई और प्रकरण को बंद कर दिया गया।

4.3 15.02.2020 को प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा यह शिकायत दर्ज कराई गई कि उसके पति, अर्थात मृतक, की हत्या प्रतिवादी संख्या 12 से 14 और अन्य लोगों द्वारा की गई थी। हालांकि, पुलिस ने उक्त शिकायत दर्ज करने से इंकार कर दिया। जब अपराध दर्ज नहीं हुआ, तो प्रतिवादी संख्या 1 ने दंड प्रक्रिया संहिता (सी.आर.पी.सी.) की धारा 200 का हवाला देते हुए एक निजी परिवाद दर्ज कराया, जिसका पी.सी.आर. नंबर 51691/2020 था, जिसमें उसने आरोप लगाया कि उसके पति के. रघुनाथ की हत्या प्रतिवादी संख्या 10 से 14 द्वारा की गई। मामले में जांच करने के पश्चात, सम्मानीय मजिस्ट्रेट ने दिनांक 02.03.2020 को जांच का आदेश

दिया। आदेश के अनुसार, प्रतिवादी संख्या 10 से 13 और अपीलकर्ताओं के विरुद्ध अपराध संख्या 89/2020 में एफआईआर दर्ज की गई, जिसमें आईपीसी की धाराओं 34, 120B, 467, 468, 421, 474, 302, 464 और 471 के तहत दंडनीय अपराध शामिल थे। इसके बाद दो अन्य अपराध भी दर्ज किए गए: अपराध संख्या 148/2020, जिसमें अपीलकर्ताओं और प्रतिवादी संख्या 12 एवं 13 के विरुद्ध आईपीसी की धाराओं 34, 120B, 468, 465, 471, 420 के तहत मामला दर्ज किया गया। अपराध संख्या 7 /2021, जो अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध आईपीसी की धाराओं 420, 255, 257, 259, 256, 258 और 260 के तहत दर्ज किया गया। यह अपराध 05.03.2020 को दर्ज किया गया, अर्थात घटना के लगभग दस महीने बाद। अपराध दर्ज होने के बाद प्रतिवादियों के खिलाफ मृतक की हत्या के आरोपों पर कई दीवानी कार्यवाहियां भी शुरू की गईं।

4.4 इस बीच, प्रतिवादियों ने उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया और रिट याचिका संख्या 4333/2021 दायर की, क्योंकि अपराध दर्ज होने के बावजूद जांच पूरी नहीं हुई थी। उक्त याचिका का निपटान करते हुए एक विशेष जांच दल (एसआईटी) गठित करने का निर्देश दिया गया, ताकि शिकायत की जांच दो सप्ताह के भीतर की जा सके। निर्देशानुसार, संबंधित विभाग द्वारा तीन सदस्यीय विशेष जांच दल (एसआईटी) गठित करने का आदेश जारी किया गया। एसआईटी ने जांच की और अपराध संख्या 89/2020 तथा अन्य अपराध 148/2020 और 7/2021 में संबंधित न्यायालय के समक्ष 'बी' रिपोर्ट प्रस्तुत की। सम्मानीय मजिस्ट्रेट ने अपने आदेश दिनांक 21.02.2022 में 'बी' रिपोर्ट को खारिज कर दिया और एच.ए.एल. पुलिस स्टेशन के थाना प्रभारी को, जिनके पास प्रारंभ में शिकायत दर्ज की गई थी, आगे की जांच करने और 22.04.2022 तक रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। सम्मानीय मजिस्ट्रेट ने यह देखा कि एसआईटी ने मामले की पूरी निष्पक्षता के साथ जांच नहीं की और जांच एकपक्षीय रही। मजिस्ट्रेट ने यह भी नोट किया कि एसआईटी की रिपोर्ट में मृतक की मृत्यु के कारण, मृतक की मृत्यु के बाद घटनाक्रम आदि जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं को शामिल नहीं किया गया, जो जांच के लिए आवश्यक महत्वपूर्ण तथ्य थे। इसलिए, मजिस्ट्रेट ने एसआईटी द्वारा की गई जांच को असंतोषजनक, अधूरी और लापरवाह करार दिया। प्रतिवादियों ने मजिस्ट्रेट द्वारा पारित उक्त आदेश को चुनौती दी और यह मांग की कि मामले की जांच सीबीआई को सौंपी जाए, क्योंकि एसआईटी ने पहले ही मामले में 'बी' रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी थी।

4.5 उच्च न्यायालय ने विवादित आदेश के माध्यम से प्रतिवादियों की रिट याचिका को आंशिक रूप से स्वीकार किया और सीबीआई को आगे की जांच करने के लिए परमादेश (रिट ऑफ मैनडेमस) जारी किया। उच्च न्यायालय ने यह देखा कि सम्मानीय मजिस्ट्रेट द्वारा पारित वह निर्देश, जिसमें एच.ए.एल. पुलिस स्टेशन द्वारा आगे की जांच कराने का आदेश दिया गया था, वह अवैध क्षेत्राधिकार में दिया गया था और इसे रद्द किया जाना आवश्यक था, क्योंकि उच्च न्यायालय की शक्ति का प्रयोग सम्मानीय मजिस्ट्रेट द्वारा नहीं किया जा सकता।

4.6 तदुपरांत, उच्च न्यायालय द्वारा विवादित आदेश के माध्यम से दिए गए निर्देश के पालन में, सीबीआई ने दिनांक 30.09.2022 को अपीलकर्ताओं और प्रतिवादी संख्या 12 से 14 के विरुद्ध आरसी.5/S/2022/सीबीआई/एससीबी में एफआईआर दर्ज की। इसके अलावा, सीबीआई, विशेष शाखा चेन्नई द्वारा अपराध संख्या 06(S)/2022 और आरसी 7(S)/2022 भी दर्ज किए गए। अपीलकर्ताओं ने विवादित आदेश के विरुद्ध अपीलें दायर की हैं। इस बीच, सीबीआई ने दिनांक 11.11.2022 को प्रतिवादी संख्या 12 से 14 के आवासीय कार्यालय और आवासीय परिसरों पर छापा मारा।

पक्षकारों के तर्क / दलीलें:

5. प्रारंभ में, अपीलकर्ताओं की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अमन लेखी ने यह तर्क दिया कि अपराध संख्या 89 एवं 148/2020 और अपराध संख्या 7/2021 में सीबीआई द्वारा “आगे की जांच” कराने का निर्देश अवैध और असंगत है।

उन्होंने आगे यह भी कहा कि अपीलकर्ताओं ने दिनांक 09.12.2020 और 04.07.2022 के आदेशों को छिपाया नहीं, जैसा कि प्रतिवादियों ने आरोपित किया है। ये आदेश क्रमशः **आपराधिक याचिका** संख्या 2642/2020 और 5856/2022 में जारी किए गए थे, जो केवल एक एफआईआर यानी अपराध संख्या 89/2020 (पी.सी.आर. 51691/20) से उत्पन्न आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करने से संबंधित थे, और वर्तमान अपीलों का विषय नहीं हैं।

वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी प्रश्न उठाया कि क्या सम्मानीय मजिस्ट्रेट के पास 190(1)(a) दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत संज्ञान लेने का अधिकार था, जब 174 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत कार्यवाही बंद कर दी गई थी। इसके अलावा, क्या वह केवल सीमित शक्ति का प्रयोग करते हुए

202(1)दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत, जो केवल यह निर्धारित करने के लिए है कि आगे की कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं, एक निजी शिकायत के माध्यम से, जो समय पर नहीं दायर की गई थी, ऐसे अपराध की जांच कराने का निर्देश दे सकता था जो विशेष रूप से सत्र न्यायालय में निपटाए जाने योग्य है।

वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह प्रस्तुत किया कि प्रतिवादियों ने अपीलकर्ताओं के विरुद्ध निजी शिकायत लगभग दस महीने बाद, और उस तथ्य की जानकारी प्राप्त करने के पश्चात दायर की कि अपीलकर्ता मृतक की अंतिम वसीयत दिनांक 20.04.2018 के प्रत्यक्षदर्शी थे, जिसमें प्रतिवादी संख्या 1 और 2 को सीमित लाभ दिए गए थे। अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि प्रतिवादी संख्या 2, जो यू.डी.आर. मामले में सूचक था, ने समान बयान दिया कि उसके पिता आर्थिक संकट में थे और उन्होंने आत्महत्या की। यह भी कहा गया कि कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका संख्या 4333/2021 में दिनांक 28.04.2021 को दिए गए आदेश के अनुसार, पुलिस के उपायुक्त द्वारा नेतृत्वित एसआईटी का गठन किया गया, जिसने 639-पृष्ठों की बी-रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें निष्कर्ष निकला कि अपीलकर्ताओं को प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा निजी शिकायत में लगाए गए आरोपों से जोड़ने के लिए कोई ठोस साक्ष्य नहीं हैं। इसके अलावा, यह तर्क दिया गया कि अपीलकर्ता मृतक के पिता और भाई हैं, जो निर्धन किसान हैं। अपीलकर्ता संख्या 1 की उम्र 89 वर्ष है और वे जीवन के अंतिम चरण में हैं, जबकि छोटे भाई अपीलकर्ता संख्या 2 ने अपना पूरा जीवन चित्तूर में बिताया। वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी कहा कि प्रतिवादी संख्या 1, 2 और अन्य पोता मृतक की सारी संपत्तियों को हथियाना चाहते हैं, जो सही रूप से डी.ए. श्रीनिवास के अधिकार में थीं।

अपीलकर्ताओं की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे यह तर्क दिया कि अपराध केवल सत्र न्यायालय में निपटने योग्य होने के कारण, सम्मानीय मजिस्ट्रेट द्वारा सी.आर.पी.सी. की धारा 202 के तहत जांच का निर्देश नहीं दिया जा सकता था। मजिस्ट्रेट का दायित्व था कि वह धारा 202(2) के तहत शिकायतकर्ता को सभी गवाह प्रस्तुत करने के लिए बुलाए और उन्हें शपथ लेकर पूछताछ करे। इसके बाद भी एफआईआर दर्ज नहीं की जा सकती थी, क्योंकि एफआईआर केवल संहिता के अध्याय XII के तहत ही दर्ज की जा सकती थी। अधिवक्ता ने यह इंगित किया कि अपनाई गई प्रक्रिया कानून के अनुसार अज्ञात और असंगत थी, क्योंकि एफआईआर का

पंजीकरण स्वयं अवैध था और इसलिए सीबीआई को जांच सौंपने का कोई अवसर नहीं था। वास्तव में, अपीलकर्ताओं को कोई सुनवाई तक नहीं दी गई।

6. इसके विपरीत, प्रतिवादियों की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी और श्री दुश्यंत दवे ने यह प्रस्तुत किया कि मृतक पूर्व सांसद डीकेए के विश्वासपात्र थे और एक सफल रियल एस्टेट व्यवसायी होने के नाते अपने जीवनकाल में कई चल और अचल संपत्तियाँ वैध रूप से अर्जित की थीं, जो उनकी पत्नी और बच्चों को विरासत में मिलनी थीं। चूँकि मृतक को अपने जीवन के लिए खतरा महसूस हो रहा था, उसने दिनांक 28.01.2016 को एक वसीयत निष्पादित की, जिसमें उसने अपनी सारी संपत्तियाँ अपनी पत्नी/प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में देने की इच्छा व्यक्त की। हालांकि, अचानक दिनांक 20.04.2018 की एक कूटरचित वसीयत उत्पन्न हुई, जिसे 31.12.2019 को मृतक की मृत्यु के बाद पंजीकृत किया गया और इसमें मृतक की संपत्तियाँ प्रतिवादी संख्या 12 के पक्ष में वसीयत की गई। यह वसीयत प्रतिवादी संख्या 13 के सहयोग से संपत्तियों को हड़पने की साजिश के तहत तैयार की गई थी। इस अपील में संलग्न सत्य प्रयोगशाला (परिशिष्ट आर-3) की रिपोर्ट में पाया गया कि 20.04.2018 की वसीयत कूटरचित थी। गांधी नगर उप-पंजीयक कार्यालय ने भी प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा दर्ज शिकायत पर स्वतंत्र प्रारंभिक जांच करने के बाद हलासुरु पुलिस स्टेशन में शिकायत दर्ज की। बाद में, 04.01.2021 को अपराध संख्या 7/2021 के तहत स्टांप और दस्तावेजों की जालसाजी के लिए एफआईआर दर्ज की गई (परिशिष्ट पी-17)। इन तथ्यों के आधार पर, यह तर्क दिया गया कि एसआईटी का गठन पूरी तरह असफल और निष्प्रभावी साबित हुआ। इसलिए, उच्च न्यायालय ने सीबीआई से जांच कराने के लिए सही दिशा-निर्देश दिए।

वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी ने जोर देकर यह तर्क दिया कि जब सम्मानीय मजिस्ट्रेट ने एफआईआर दर्ज करने का निर्देश दिया था, तब अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय में आपराधिक याचिका संख्या 2642/2020 दायर की, जिसमें अपराध संख्या 89/2020 में एफआईआर दर्ज करने के आदेश तथा पूरे आपराधिक कार्यवाही और बेंगलुरु के एच.ए.एल. पुलिस स्टेशन की जांच को रद्द करने की मांग की गई थी। हालांकि, उक्त याचिका दिनांक 09.12.2020 के आदेश (परिशिष्ट आर-4 इस अपील में) के माध्यम से वापसी के रूप में खारिज कर दी गई। अतः एफआईआर दर्ज करने के निर्देश को चुनौती देने का तर्क अब अपीलकर्ताओं के लिए उपलब्ध नहीं है।

एसआईटी रिपोर्ट में पाई गई विसंगतियों की ओर इंगित करते हुए, जो सम्मानीय मजिस्ट्रेट के आदेश और विवादित आदेश दोनों में उजागर की गई हैं, श्री रोहतगी ने यह प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने सही रूप से हस्तक्षेप किया और सीबीआई द्वारा निष्पक्ष और स्वतंत्र जांच कराने का निर्देश दिया।

<u>विश्लेषण</u>

7. हमने पक्षकारों के वरिष्ठ अधिवक्ताओं की विस्तृत सुनवाई की, जिन्होंने हमें रिकॉर्ड पर उपलब्ध समस्त सामग्री से अवगत कराया। हालांकि, पारित किए जाने वाले आदेश की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, हम विवरण का उल्लेख नहीं कर रहे हैं, ताकि भविष्य की किसी भी कार्यवाही, जिसमें सीबीआई की जांच भी शामिल है, में किसी भी पक्ष पर इसका प्रभाव न पड़े।

8. अपीलकर्ताओं के वरिष्ठ अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों का मुख्य फोकस मजिस्ट्रेट की उस शक्ति पर था, जिसके तहत वह केवल सत्र न्यायालय में निपटने योग्य अपराध के लिए एफआईआर दर्ज करने का निर्देश दे सकते हैं। हालांकि, उक्त तर्क पर गंभीरता से विचार करने के बावजूद, हम इस मुद्दे पर विस्तार से विचार करने के पक्ष में नहीं हैं। इसका कारण यह है कि जब सम्मानीय मजिस्ट्रेट ने दिनांक 02.03.2020 के आदेश के माध्यम से एफआईआर दर्ज करने का निर्देश दिया, तब अपीलकर्ताओं ने इसे धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत आपराधिक याचिका संख्या 2642/2020 दायर करके चुनौती दी थी, जिसे दिनांक 09.12.2020 के आदेश के माध्यम से वापसी के रूप में खारिज कर दिया गया, निम्नलिखित शब्दों में:

“यह आपराधिक याचिका दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत दायर की गई है, जिसमें यह प्रार्थना की गई है कि माननीय XXIX ए.सी.एम.एम., मेयो हॉल, बेंगलुरु में लंबित पूरी आपराधिक कार्यवाही, पी.सी.आर. संख्या 51691/2020, तथा इसके फलस्वरूप अपराध संख्या 89/2020 में एफआईआर दर्ज करने और प्रथम प्रतिवादी एच.ए.एल. पुलिस स्टेशन, बेंगलुरु द्वारा की गई जांच को रद्द किया जाए।

यह आपराधिक याचिका आज दाखिला हेतु प्रस्तुत हुई, और वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश दिया:"

<u>आदेश</u>

श्री संजय यादव, अपीलकर्ताओं के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री महेश एस. की ओर से पेश हुए, जिन्होंने दिनांक 09.12.2020 का एक ज्ञापन दायर किया, जिसमें पिटिशन को वापस लेने की अनुमति मांगी गई और यह स्वतंत्रता सुरक्षित रखी कि भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर इस माननीय न्यायालय के समक्ष पुनः आवेदन किया जा सके।

2. श्री हशमथ पासा, प्रतिवादी संख्या 2 के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री कलीम साबिर की ओर से, भी आभासी माध्यम से उपस्थित हैं। उन्होंने प्रस्तुत किया कि उन्हें याचिका को वापस लेने में कोई आपत्ति नहीं है।

3. उक्त ज्ञापन रिकॉर्ड में संलग्न कर दिया गया और पिटिशन को वापसी के रूप में खारिज कर दिया गया।
मुख्य पिटिशन के निपटान के दृष्टिगत, अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 1/2020 विचारार्थ शेष नहीं रहती और इसे भी निपटाया जाना उपयुक्त है।

एसडी/-

न्यायाधीश

9. चूंकि अपीलकर्ताओं ने एफआईआर के पंजीकरण के विरुद्ध चुनौती वापस ले ली है, हम इस मामले को आगे बढ़ाने की स्थिति में नहीं हैं क्योंकि यह पक्षकारों के लिए अंतिम और बाध्यकारी हो गया है। अतः, एफआईआर के पंजीकरण से संबंधित मुद्दा किसी भी आगामी कार्यवाही में चुनौती के लिए खुला नहीं है।

10. अब हम यह विचार करेंगे कि क्या मामले की तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, उच्च न्यायालय द्वारा सीबीआई से जांच कराने का निर्देश देना न्यायसंगत था।

11. निर्णयों की श्रृंखला में यह निश्चित हो चुका है कि उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय, संवैधानिक न्यायालय होने के नाते, मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के आधार पर सीबीआई जांच निर्देश देने की असाधारण शक्ति से युक्त हैं। संवैधानिक न्यायालयों को संप्रभु एवं सर्वोच्च संवैधानिक संस्था होने के नाते न्याय सेवा करने का कर्तव्य अपेक्षापूर्वक एवं आदरपूर्वक सौंपा

गया है। "**विनय त्यागी बनाम इरशाद अली**"2 में, इस न्यायालय ने कहा कि सीबीआई जांच निर्देश देने की शक्ति को असाधारण परिस्थितियों में ही एवं संयमपूर्वक प्रयोग किया जाना चाहिए, किन्तु जब तथ्य ऐसा मांगें तो पूर्ण न्याय करने, मौलिक अधिकारों को लागू करने, विश्वसनीयता प्रदान करने एवं आत्मविश्वास जगाने के लिए इसे अत्यंत आवश्यक है। इस न्यायालय ने पैराग्राफ 33, 43, 44 एवं 45 में निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित किया है:

> "33. इस निर्णय से स्पष्ट होता है कि मजिस्ट्रेट के पास स्पष्ट शक्ति है कि वह धारा 173(2) के तहत रिपोर्ट दायर होने पर आगे की जांच कराने का निर्देश दे सकता है और इस शक्ति का उपयोग धारा 156(3) की सहायता से भी कर सकता है। यदि धारा 173(8) की व्यापक व्याख्या देने में कोई संदेह रह गया था, तो इसे हेमंत दशमाना बनाम सीबीआई [(2001) 7 एससीसी 536 : 2001 एससीसी (आपराधिक) 1280] में इस न्यायालय के निर्णय द्वारा समाप्त कर दिया गया, जिसमें न्यायालय ने कहा कि यद्यपि उक्त धारा में विशिष्ट रूप से आगे की जांच कराने की अदालत की शक्ति का उल्लेख नहीं है, फिर भी इसमें वर्णित पुलिस की आगे की जांच करने की शक्ति अदालत के अनुरोध पर सक्रिय की जा सकती है। जब कोई ऐसा आदेश उस अदालत द्वारा पारित किया जाता है जिसके पास इस कार्य का क्षेत्राधिकार है, तो उच्च न्यायालय की पुनरीक्षणीय अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उस आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए। ऐसे आदेश सामान्यतः न्याय की प्राप्ति के लिए लाभकारी होते हैं। स्पष्ट रूप से यह स्पष्ट किया गया कि मजिस्ट्रेट, सी.आर.पी.सी. की धारा 173(8) के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए सीबीआई को मामले की आगे जांच करने और अतिरिक्त साक्ष्य इकट्ठा करने का निर्देश दे सकता है। इसमें अपीलकर्ता द्वारा जांच पर उठाए गए आपत्तियों और जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत नई रिपोर्ट का ध्यान रखा जाएगा, जो धारा 173 की उप-धारा (2) से उप-धारा (6) के अनुसार संचालित होगी। कोर्ट के लिए धारा 173(8) की व्याख्या को संकीर्ण रूप से करने का कोई अवसर नहीं है।

---

2. (2013) 5 एससीसी 762

अंतिम रिपोर्ट दाखिल होने के बाद, सम्मानीय मजिस्ट्रेट जांच एजेंसी द्वारा रिकॉर्ड पर प्रस्तुत सामग्री के आधार पर संज्ञान भी ले सकता है और आगे की जांच कराने का निर्देश देना उसके लिए अनुमत है। उचित और निष्पक्ष जांच किसी भी आपराधिक जांच की विशेष पहचान होती है।

43. इस चरण पर हम आपराधिक न्यायशास्त्र के एक अन्य सुव्यवस्थित सिद्धांत का भी उल्लेख कर सकते हैं कि उच्चतर न्यायालयों को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत अथवा भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत 'आगे की जांच', 'नई' या 'डी नोवो' जांच तथा यहाँ तक कि 'पुनः जांच' का निर्देश देने का अधिकार क्षेत्र प्राप्त है। 'नई', 'डी नोवो' और 'पुनः जांच' समानार्थी अभिव्यक्तियाँ हैं और विधि में इनका परिणाम एक ही होता है। उच्चतर न्यायालयों को, यदि न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक हो, तो जांच को एक एजेंसी से दूसरी एजेंसी को स्थानांतरित करने की शक्ति भी प्राप्त है। यद्यपि यह भी एक स्थापित सिद्धांत है कि इस शक्ति का प्रयोग उच्चतर न्यायालयों द्वारा अत्यंत संयमपूर्वक और अत्यधिक सावधानी के साथ ही किया जाना चाहिए।"

44. हमने इस मुद्दे पर विस्तार से विचार किया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत उच्च न्यायालय की शक्तियाँ, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से, धारा 228 के अंतर्गत मजिस्ट्रेट की शक्तियों की व्यापकता को नियंत्रित या सीमित नहीं करती हैं। जहाँ भी न्यायालय में आरोप-पत्र प्रस्तुत कर दिया गया है, वहाँ सामान्यतः यह न्यायालय भी जांच को पुनः नहीं खोलता, विशेष रूप से उसे किसी विशेषीकृत एजेंसी को सौंपकर। यह सुरक्षित रूप से कहा और निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि किसी उपयुक्त मामले में, जब न्यायालय को यह प्रतीत हो कि पुलिस प्राधिकारियों द्वारा की गई जांच सही दिशा में नहीं है और पूर्ण न्याय करने के लिए तथा जब मामले के तथ्य इसकी माँग करते हों, तब जांच को किसी विशेषीकृत एजेंसी को सौंपना न्यायालय के लिए सदैव खुला रहता है। इन सिद्धांतों की इस न्यायालय द्वारा दिशा बनाम गुजरात राज्य [(2011) 13एससीसी 337 : (2012) 2 एससीसी (आपराधिक) 628], विनीत नारायण बनाम भारतीय संघ [(1998) 1 एससीसी 226 : 1998 एससीसी (आपराधिक) 307], भारतीय बनाम सुशील कुमार मोदी [(1996) 6 एससीसी 500] तथा रुबाबुद्दीन शेख बनाम गुजरात राज्य

[(2010) 2 एससीसी 200 : (2010) 2 एससीसी(आपराधिक) 1006] के निर्णयों में अनुमोदन के साथ पुनः प्रतिपादित किया गया है।

45. पुनः जाँच ' या 'नए सिरे से जाँच' का आदेश देने/निर्देशित करने की शक्ति उच्च न्यायालयों के क्षेत्राधिकार में आती है, वह भी केवल असाधारण मामलों में। यदि दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का परीक्षण किया जाए, तो रिपोर्ट को निरस्त करने के लिए कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है, सिवाय इसके कि जाँच एजेंसी एक क्लोज़र रिपोर्ट दाख़िल कर सकती है (जहाँ जाँच एजेंसी के अनुसार कोई अपराध बनता ही नहीं है)। ऐसी रिपोर्ट भी माननीय मजिस्ट्रेट की स्वीकृति के अधीन होती है, जो अपने विवेक से उसे स्वीकार कर सकते हैं या नहीं भी कर सकते हैं। उचित कारणों के आधार पर, न्यायालय ऐसी रिपोर्ट को स्वीकार करने से इंकार करते हुए 'आगे की जाँच' का निर्देश दे सकता है, अथवा मामले के अभिलेख और उसके साथ संलग्न दस्तावेज़ों के आधार पर अभियुक्तों को तलब भी कर सकता है।"

12. एक बार फिर, 'पूजा पाल बनाम भारत संघ एवं अन्य'[3] के मामले में, इस न्यायालय ने अनुच्छेद 75, 79 एवं 80 में निम्नलिखित रूप से निर्णय दिया है:

"75. यह कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 और 226 के अंतर्गत संवैधानिक न्यायालयों की असाधारण शक्ति, जिसके तहत सीबीआई को जांच करने का निर्देश दिया जा सकता है, का प्रयोग अत्यंत सावधानी के साथ किया जाना चाहिए–इस बात पर लोकतांत्रिक अधिकार संरक्षण समिति [पश्चिम बंगाल राज्य बनाम लोकतांत्रिक अधिकार संरक्षण समिति, (2010) 3 एससीसी 571 : (2010) 2 एससीसी (आपराधिक) 401 के मामले में, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, विशेष रूप से बल दिया गया है। यह अवलोकन करते हुए कि इस संबंध में कोई कठोर या अपरिवर्तनीय दिशानिर्देश निर्धारित नहीं किए जा सकते, यह रेखांकित किया गया कि ऐसा आदेश सामान्य रूप से या केवल इस कारण से पारित नहीं किया जा सकता कि किसी पक्ष ने स्थानीय पुलिस के विरुद्ध कुछ आरोप लगाए हों।

---

3. (2016) 3 एससीसी 135

इस प्रकार की शक्ति का प्रयोग केवल असाधारण परिस्थितियों में किया जा सकता है, जहाँ जांच को विश्वसनीयता प्रदान करना और उस पर विश्वास स्थापित करना आवश्यक हो, या जहाँ घटना के राष्ट्रीय अथवा अंतरराष्ट्रीय प्रभाव हों, या जहाँ पूर्ण न्याय सुनिश्चित करने तथा मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ऐसा आदेश आवश्यक हो।

79. कानूनन सामान्य जांच एजेंसी द्वारा आरोप-पत्र दाखिल किए जाने के बावजूद, किसी निष्पक्ष एजेंसी जैसे सीबीआई को जांच सौंपने पर कोई पूर्ण प्रतिबंध नहीं है–इस संबंध में स्थापित न्यायिक सिद्धांत समय की कसौटी पर खरा उतर चुका है और निर्विवाद रूप से मान्य है। तथापि, यह उपाय केवल असाधारण तथ्यात्मक परिस्थितियों में ही अपनाया जाना चाहिए, जहाँ निष्पक्ष, ईमानदार और पूर्ण जांच सुनिश्चित करना आवश्यक हो तथा पीड़ितों और सामान्य जनता का न्याय प्रशासन तंत्र में विश्वास सुदृढ़ करना उद्देश्य हो। ऐसा कदम किसी भी स्थिति में सामान्य प्रक्रिया या नियमित कार्यवाही का विषय नहीं बन सकता, बल्कि इसे केवल इस पवित्र उद्देश्य की पूर्ति हेतु अपनाया जाना चाहिए कि बिना भय या पक्षपात के, सभी के साथ समान व्यवहार करते हुए, न्याय वितरण की एक स्वतंत्र और निष्कलंक व्यवस्था सुनिश्चित की जा सके।

80. सीबीआई की ओर से उद्धृत निर्णयों में भी, इस न्यायालय ने के. सरवनन करुप्पासामी [के. सरवनन करुप्पासामी बनाम तमिलनाडु राज्य, (2014) 10 एससीसी 406 : (2015) 1 एससीसी (आपराधिक) 133] तथा सुदीप्ता लेनका [सुदीप्ता लेनका बनाम ओडिशा राज्य, (2014) 11 एससीसी 527 : (2014) 3 एससीसी (आपराधिक) 428] के मामलों में उपर्युक्त सिद्धांतों को दोहराया है, जो जांच की विश्वसनीयता और उस पर जनता के विश्वास की प्रधानता, पूर्ण न्याय की आवश्यकता, तथा मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन को रेखांकित करते हैं। इन सभी पहलुओं का मूल्यांकन उच्च सार्वजनिक हित, कानून के शासन की सर्वोपरिता और उसके निर्णायक महत्व की कसौटी पर किया जाना आवश्यक है।

13. प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ता इन अपीलों को बनाए रखने के हकदार नहीं हैं, क्योंकि वर्तमान मामले में केवल जाँच का निर्देश दिया गया है। इसके विपरीत, अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित वरिष्ठ

अधिवक्ता श्री अमन लेखी ने प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ताओं का प्रारंभिक चरण में भी अपने बचाव का विधिक अधिकार विधि द्वारा भली-भाँति मान्यता प्राप्त है, और यदि उन्हें यह आशंका हो कि उन्हें अनावश्यक रूप से किसी आपराधिक अभियोजन में घसीटा जा रहा है, तो वे इस मामले में सीबीआई द्वारा की जा रही जाँच को चुनौती देने हेतु यह अपील बनाए रखने के अधिकारी हैं।

14. *भारतीय संघ एवं अन्य बनाम डब्ल्यू. एन. चड्ढा* 4 के प्रकरण में यह विधि-सिद्ध सिद्धांत स्थापित है कि एफआईआर के पंजीकरण के चरण में संभावित अभियुक्त को सुनवाई का कोई अधिकार नहीं होता। यद्यपि अपीलकर्ता एफआईआर दर्ज किए जाने को चुनौती देने में सफल नहीं हुए हैं, क्योंकि उन्होंने उच्च न्यायालय में आपराधिक याचिका सं. 2642/2020 को वापस लेकर उस चुनौती को त्याग दिया था, तथापि हम श्री लेखी द्वारा उठाए गए तर्क से निपटने के उद्देश्य से इन सिद्धांतों का उल्लेख कर रहे हैं। अनुच्छेद 92 में निम्नलिखित कहा गया है:

> "92. इसके अतिरिक्त, अभियुक्त को जाँच की प्रक्रिया, तरीके अथवा पद्धति के संबंध में कोई अधिकारपूर्वक हस्तक्षेप करने या अपनी बात रखने का अधिकार नहीं है। संहिता की समग्र रूपरेखा के अंतर्गत, कुछ अपवादों को छोड़कर, पुलिस रिपोर्ट पर दर्ज मामले की जाँच के दौरान अभियुक्त को जाँच में कोई अधिकारपूर्वक भागीदारी प्राप्त नहीं होती, जब तक कि जाँच धारा 173(2) दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने पर समाप्त न हो जाए; अथवा ऐसे मामलों में, जो पुलिस रिपोर्ट के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार से संस्थित हों, तब तक अभियुक्त को कोई अधिकार नहीं होता जब तक कि धारा 204 के अंतर्गत प्रक्रिया जारी न कर दी जाए। यहाँ तक कि उन मामलों में भी जहाँ किसी अपराध का संज्ञान शिकायत के आधार पर लिया गया हो–चाहे वह अपराध मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय हो या विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय–अभियुक्त को तब तक कोई भागीदारी का अधिकार नहीं होता जब तक कि प्रक्रिया जारी न कर दी जाए। यदि धारा 202 के अंतर्गत प्रक्रिया जारी करने को स्थगित किया जाता है, तो अभियुक्त उस पश्चातवर्ती जाँच में उपस्थित तो हो सकता है, किंतु उसमें भाग नहीं ले सकता। इस संबंध में अनेक न्यायिक निर्णय उपलब्ध हैं, किंतु हम उन्हें यहाँ दोहराना आवश्यक नहीं समझते। साथ ही, हम यह भी स्पष्ट करना चाहते हैं

कि दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत कुछ विशेष परिस्थितियों में मजिस्ट्रेट को अभियुक्त को सुनवाई का अवसर प्रदान करने का अधिकार देने वाले प्रावधान भी मौजूद हैं।

15. **डब्ल्यू. एन. चड्ढा (उपर्युक्त) में** प्रतिपादित सिद्धांत को *सतीश कुमार न्यालचन्द शाह बनाम राज्य गुजरात एवं अन्य* में पुनः दोहराया गया है, जिसमें अनुच्छेद 10 में निम्नलिखित कहा गया है:

> "10. ..... यह उल्लेखनीय है कि इस स्तर पर, धारा 173(8) दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आगे की जाँच हेतु दायर आवेदन में, प्रस्तावित अभियुक्त श्री भौमिक को भी कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। यह बात इस न्यायालय द्वारा डब्ल्यू. एन. चड्ढा [भारतीय संघ एवं अन्य बनाम डब्ल्यू. एन. चड्ढा , 1993 सुप (4) एससीसी 260 : 1993 एससीसी (आपराधिक) 1171]; नरेंदर जी गोयल [नरेंदर जी गोयल बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2009) 6 एससीसी 65 : (2009) 2 एससीसी (आपराधिक) 933] तथा दिनुभाई बाघाभाई सोलंकी [दिनुभाई बाघाभाई सोलंकी बनाम गुजरात राज्य, (2014) 4 एससीसी 626 : (2014) 2 एससीसी (आपराधिक) 384] में स्पष्ट रूप से कही गई है। दिनुभाई बाघाभाई सोलंकी [दिनुभाई बाघाभाई सोलंकी बनाम गुजरात राज्य, (2014) 4 एससीसी 626 : (2014) 2 एससीसी (आपराधिक) 384] में, इस न्यायालय के एक अन्य निर्णय श्री भगवान् समर्ध श्रीपदा वल्लभ वेंकट विश्वनंद महाराज बनाम आंध्र प्रदेश राज्य [श्री भगवान् समर्ध श्रीपदा वल्लभ वेंकट विश्वनंद महाराज बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (1999) 5 एससीसी 740 : 1999 एससीसी (आपराधिक) 1047] पर विचार करने के उपरांत यह प्रतिपादित किया गया कि धारा 173(8) दंड प्रक्रिया संहिता में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह संकेत मिले कि आगे की जाँच के लिए कोई निर्देश दिए जाने से पूर्व न्यायालय अभियुक्त को सुनने के लिए बाध्य है। श्री भगवान् समर्ध [श्री भगवान् समर्ध श्रीपदा वल्लभ वेंकट विश्वनंद महाराज बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (1999) 5 एससीसी 740 : 1999 एससीसी (आपराधिक) 1047] में, इस न्यायालय ने अनुच्छेद 11 में निम्नलिखित कहा है: (देखें श्री भगवान् समर्ध प्रकरण, एससीसी, पृ. 743)।"

---

4. (1993) सप. 4 एससीसी 260

5. (2020) 4 एससीसी 22

> "**11.** ऐसी स्थिति में, न्यायालय की यह शक्ति कि वह पुलिस को आगे की जाँच करने का निर्देश दे, किसी भी प्रकार के प्रतिबंध से बाधित नहीं की जा सकती। धारा 173(8) में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह संकेत मिले कि ऐसा कोई निर्देश दिए जाने से पूर्व न्यायालय अभियुक्त को सुनने के लिए बाध्य है। न्यायालय पर ऐसी कोई बाध्यता थोपने से केवल इतना ही होगा कि न्यायालय को सभी संभावित अभियुक्तों की तलाश कर उन्हें सुनवाई का अवसर देने के अतिरिक्त बोझ से लाद दिया जाए। चूँकि विधि इसकी अपेक्षा नहीं करती, इसलिए हम मजिस्ट्रेट पर ऐसी कोई बाध्यता नहीं डालते।"

16. इस प्रकार, उपर्युक्त विषय पर स्थापित विधि, श्री लेखी द्वारा उठाए गए तर्क का समुचित उत्तर देती है। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि एक बार जब एफआईआर दर्ज हो जाती है और जाँच प्रारंभ हो चुकी होती है, तब सीबीआई द्वारा जाँच कराए जाने के निर्देश को किसी संभावित संदिग्ध या अभियुक्त द्वारा चुनौती देना स्वीकार्य नहीं है। किसी विशेष जाँच एजेंसी को जाँच सौंपने का विषय मूलतः न्यायालय के विवेकाधिकार के अंतर्गत आता है।

17. इस चरण पर, इस न्यायालय द्वारा ***मंदाकिनी दिवान एवं अन्य बनाम छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय एवं अन्य***[6] के मामले में की गई टिप्पणियों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा, जिसमें इस न्यायालय ने वर्तमान मामले के समान परिस्थितियों में सीबीआई द्वारा जाँच कराए जाने का निर्देश दिया था, जहाँ प्रारंभिक स्तर पर पुलिस ने इसे आत्महत्या का मामला मानते हुए समापन रिपोर्ट (क्लोज़र रिपोर्ट) दाखिल की थी। इस संबंध में इस न्यायालय ने अनुच्छेद 8, 20 एवं 21 में निम्नलिखित कहा है:

> "8. अपीलकर्ताओं के अनुसार, पुलिस ने इसे आत्महत्या का मामला मानते हुए समापन रिपोर्ट (क्लोज़र रिपोर्ट) दाखिल की। प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज होने के पश्चात, निष्पक्ष जाँच की माँग को लेकर अपीलकर्ताओं ने बार-बार संबंधित प्राधिकारियों के समक्ष अभ्यावेदन प्रस्तुत किए। अपीलकर्ताओं द्वारा प्राधिकारियों को दी गई सभी शिकायतों के परिणामस्वरूप भी प्रतिवादी संख्या 7 के विरुद्ध एफआईआर दर्ज नहीं की गई। यद्यपि सभी शिकायतों की जाँच की गई, तथापि अंततः प्रतिवादी संख्या 7 द्वारा डाले गए प्रभाव के कारण उन्हें बंद कर दिया गया। आज तक न तो अपीलकर्ताओं द्वारा की गई अनेक शिकायतों पर कोई एफआईआर दर्ज की गई है और न ही सत्य का पता लगाने

हेतु कोई निष्पक्ष जाँच की गई है।

---

6. 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 2448

***

20. **अवुंग्शी चिरमायो बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली)** के मामले में, इस न्यायालय ने दो चचेरे भाइयों की हत्या से संबंधित आपराधिक मामले में सीबीआई को जाँच करने का निर्देश दिया था, क्योंकि कुछ उलझाने वाले तथ्य मौजूद थे, जिनमें निर्णायक निष्कर्ष से रहित पोस्टमार्टम रिपोर्ट भी शामिल थी। इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप से निर्णय दिया: (एससीसी, पृष्ठ 572-573, अनुच्छेद 14-18)"

"14. *पश्चिम बंगाल राज्य बनाम कमेटी फॉर प्रोटेक्शन ऑफ डेमोक्रेटिक राइट्स* में प्रतिवेदित एक महत्त्वपूर्ण निर्णय में, इस न्यायालय ने विस्तार से, अन्य बातों के साथ-साथ, उन परिस्थितियों पर चर्चा की है जिनमें संवैधानिक न्यायालयों को सीबीआई जाँच के लिए निर्देश जारी करने का अधिकार प्राप्त होगा। इस न्यायालय ने यह उल्लेख किया कि जाँच के हस्तांतरण की शक्ति का प्रयोग यद्यपि अत्यंत संयम से किया जाना चाहिए, तथापि पूर्ण न्याय सुनिश्चित करने तथा मौलिक अधिकारों के उल्लंघन को रोकने के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है। इस संदर्भ में न्यायालय ने अनुच्छेद 70 में निम्नलिखित कहा: (एससीसी, पृष्ठ 602)

'70. ... जहाँ तक किसी मामले में जाँच कराने के लिए सीबीआई को निर्देश जारी करने का प्रश्न है, यद्यपि यह निर्धारित करने के लिए कोई कठोर अथवा अपरिवर्तनीय दिशानिर्देश निर्धारित नहीं किए जा सकते कि ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाए या नहीं, तथापि समय-समय पर यह दोहराया गया है कि ऐसा आदेश न तो नियमित रूप से और न ही मात्र इस आधार पर पारित किया जाना चाहिए कि किसी पक्ष ने स्थानीय पुलिस के विरुद्ध कुछ आरोप लगाए हैं। यह असाधारण शक्ति अत्यंत संयम, सावधानी एवं केवल असाधारण परिस्थितियों में ही प्रयोग की जानी चाहिए, जहाँ जाँच की विश्वसनीयता स्थापित करना और उस पर विश्वास उत्पन्न करना आवश्यक हो, अथवा

जहाँ घटना के राष्ट्रीय अथवा अंतरराष्ट्रीय प्रभाव हों, अथवा जहाँ पूर्ण न्याय सुनिश्चित करने और मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ऐसा आदेश आवश्यक हो।'

15. जाँच के किसी भी चरण की परवाह किए बिना आगे की जाँच का निर्देश देने की इस न्यायालय की शक्तियाँ अत्यंत व्यापक हैं। यह तब भी किया जा सकता है जब अभियोजन एजेंसी द्वारा आरोप-पत्र प्रस्तुत कर दिया गया हो। *भारती तमांग बनाम भारत संघ* में, इस न्यायालय ने स्वर्गीय मदन तमांग की विधवा द्वारा दायर रिट याचिका को स्वीकार किया, जिनकी एक राजनीतिक संघर्ष के दौरान हत्या हो गई थी, और सीबीआई द्वारा जाँच कराने का निर्देश दिया, जिसकी निगरानी संयुक्त निदेशक, सीबीआई द्वारा की जानी थी। इस संदर्भ में अनुच्छेद 44 में निम्नलिखित टिप्पणियाँ की गईं: (एससीसी, पृ. 601)

'44. ... चाहे वह राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता के कारण हो या व्यक्तिगत प्रतिशोध के कारण, अथवा किसी अन्य उद्देश्य से हत्या की गई हो, पुलिस का यह दायित्व है कि वह आम जनता की अपेक्षाओं पर खरी उतरे और यह प्रदर्शित करे कि दोषियों को चिन्हित कर उन्हें मुकदमे के लिए न्यायालय के समक्ष लाने हेतु कोई कसर नहीं छोड़ी जाएगी, ताकि आपराधिक कानून के प्रावधानों के अनुसार उनसे निपटा जा सके। इस प्रक्रिया में किसी भी प्रकार की ढिलाई जनहित में नहीं होगी। अतः, जैसा कि इस न्यायालय ने पूर्ववर्ती अनुच्छेदों में संदर्भित विभिन्न निर्णयों में इंगित किया है, हम यह आवश्यक समझते हैं कि अभियोजन एजेंसी को उसके कर्तव्यों और दायित्वों की याद दिलाई जाए, ताकि वह अपने कार्यों का निर्वहन प्रभावी एवं कुशलतापूर्वक करे और यह सुनिश्चित किया जा सके कि आपराधिक अभियोजन प्रभावी ढंग से संचालित हो तथा अपराध के कर्ताओं को सक्षम विधि न्यायालय द्वारा विधिसम्मत दंड दिया जाए।'

16. इस न्यायालय ने साधारण नागरिकों द्वारा उसके समक्ष प्रस्तुत की गई वास्तविक शिकायतों के प्रति न्यायालयों के सजग और संवेदनशील रहने की आवश्यकता पर अपने प्रबल विचार व्यक्त किए हैं, जैसा कि *ज़ाहिरा हबीबुल्ला एच. शेख बनाम राज्य गुजरात* के मामले में प्रतिपादित किया गया है।

17. यह उल्लेखनीय है कि अनसुलझे अपराध उन संस्थाओं के प्रति जनता के विश्वास को क्षीण कर देते हैं, जिन्हें कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए स्थापित किया गया है। आपराधिक जांच न केवल निष्पक्ष होनी चाहिए, बल्कि प्रभावी भी होनी चाहिए। हम इस बात पर कोई टिप्पणी नहीं कर रहे हैं कि जांच निष्पक्ष थी या नहीं, किंतु यह तथ्य स्वयं स्पष्ट है कि वह प्रभावी नहीं रही। मृतक के परिजन, जो मणिपुर जैसे दूरस्थ स्थान पर रहते हैं, दिल्ली में स्थित प्राधिकारियों से संपर्क करने में वास्तविक व्यावहारिक कठिनाइयों का सामना करते हैं, फिर भी उन्होंने अपनी आशा बनाए रखी है और इस प्रणाली पर विश्वास एवं भरोसा प्रदर्शित किया है। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि इस मामले को उचित एवं समुचित जांच के लिए सीबीआई को सौंपा जाना आवश्यक है, ताकि अपीलकर्ताओं के मन में किसी भी प्रकार का संदेह दूर हो सके और वास्तविक अपराधियों को न्याय के कटघरे तक लाया जा सके।

18. उपर्युक्त चर्चा के मद्देनज़र, दिल्ली उच्च न्यायालय का दिनांक 18-05-2018 का वह आदेश, जिसके द्वारा वर्तमान अपीलकर्ताओं की सीबीआई को जांच स्थानांतरित करने की प्रार्थना को खारिज किया गया था, एतद्द्वारा निरस्त किया जाता है। यह अपील स्वीकार की जाती है और हम निर्देश देते हैं कि इस मामले में सीबीआई जांच/जांच-पड़ताल करे। प्रकरण को एसआईटी से सीबीआई को स्थानांतरित किया जाएगा। अब तक मामले की जांच कर रही एसआईटी, जांच हेतु सभी प्रासंगिक कागजात और दस्तावेज सीबीआई को सौंपेगी। विस्तृत एवं समुचित जांच के उपरांत, सीबीआई यथाशीघ्र अपना संपूर्ण जांच प्रतिवेदन अथवा आरोप-पत्र संबंधित न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करेगी।

21. यह सत्य है कि सीबीआई को जांच करने का निर्देश देने की शक्ति का प्रयोग अत्यंत संयमपूर्वक किया जाना चाहिए और ऐसे आदेश नियमित रूप से पारित नहीं किए जाने चाहिए। वर्तमान मामले में, पीड़ित पक्ष ने छत्तीसगढ़ राज्य की पुलिस व्यवस्था पर पक्षपात और अनुचित प्रभाव के आरोप लगाए हैं। इसके साथ-साथ, संपूर्ण घटना के सत्य का पता लगाने के लिए, विशेष रूप से मृत्युपूर्व (एंटे-मॉर्टेम) चोटों के संबंध में, एक गहन, निष्पक्ष एवं स्वतंत्र जांच कराए जाने की आवश्यकता है। अतः हमारा मत है कि वर्तमान मामले में इस प्रकार का निर्देश दिया जाना आवश्यक है।”

18. वर्तमान मामले के तथ्यों पर पुनः आते हुए, यह स्पष्ट है कि मृतक का निकट संबंध डी.के.ए. से था, जो संसद सदस्य तथा श्री वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर (तिरुमला तिरुपति देवस्थानम) के अध्यक्ष थे। मृतक, डी.के.ए. का घनिष्ठ विश्वासपात्र, एक सफल रियल एस्टेट कारोबारी था और उसके बेंगलुरु तथा उसके आसपास विशाल संपतियाँ थीं। उसकी रहस्यमय मृत्यु से पूर्व दो भिन्न-भिन्न वसीयतों का निष्पादन किया गया था–एक उसकी पत्नी/प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में और दूसरी प्रतिवादी सं. 12 के पक्ष में, जो उसकी विवादास्पद मृत्यु के बाद पंजीकृत की गई। इसके अतिरिक्त, नामांतरण तथा स्वामित्व की घोषणा से संबंधित दीवानी कार्यवाहियाँ भी लंबित हैं, साथ ही स्टाम्प पेपरों की कूट-रचना (जालसाजी) से संबंधित आरोप भी लगाए गए हैं। विद्वान मजिस्ट्रेट ने आगे की जांच का निर्देश देते समय तथा उच्च न्यायालय ने विवादित आदेश के अंतर्गत, जांच में मौजूद गंभीर खामियों को रेखांकित किया है, जिन्हें हमने पुनः दोहराने से इस उद्देश्य से परहेज़ किया है कि इससे सीबीआई की जांच प्रभावित न हो। तथापि, यह तथ्य निर्विवाद है कि के. रघुनाथ की मृत्यु से जुड़े सत्य का निर्धारण एक संपूर्ण एवं निष्पक्ष सीबीआई जांच के पश्चात ही किया जाना आवश्यक है, और वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा निर्देश देना पूर्णतः उचित है।

19. अतः, हम उच्च न्यायालय के आदेश की पुष्टि करते हैं और अपीलों को निरस्त करते हैं। सीबीआई आठ (08) माह की अवधि के भीतर जांच पूर्ण करेगी और कर्नाटक राज्य सीबीआई को अपराध की निष्पक्ष जांच करने हेतु समस्त आवश्यक सहायता प्रदान करेगा। संबंधित पुलिस द्वारा सभी अभिलेख एवं कागजात पंद्रह (15) दिनों के भीतर सीबीआई को सौंप दिए जाएंगे। यदि सीबीआई आरोप-पत्र दायर करती है, तो वही कर्नाटक राज्य में स्थित सक्षम/अधिकारिता-युक्त सीबीआई न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा।

मामले का परिणाम: अपील खारिज।

† हेडनोट्स द्वारा: दिव्या पाण्डेय

यह अनुवाद पियूष आनंद, पैनल अनुवादक द्वारा किया गया है|